हिन्दू धर्म की वेदांत एवं हिंदुत्व से रक्षा

लेखक - अनिल चावला

1. प्रस्तावना एवं विषय परिचय

यदि आप उक्त शीर्षक को पढ़ कर चौंक गए हैं तो निश्चय ही आप हिन्दू धर्म, वेदांत और हिंदुत्व को पर्यायवाची मानते हैं। हिन्दू धर्म अत्यंत प्राचीन धर्म है। राम का जीवन काल आज से लगभग नौ हज़ार से दस हज़ार वर्ष पूर्व का माना जाता है। कृष्ण का काल उसके बाद था। ध्यान देने योग्य बात यह है कि राम और कृष्ण हिन्दू धर्म के प्रवर्तक नहीं थे। हिन्दू धर्म उनके जन्म के पूर्व ही ऋषियों द्वारा प्रतिपादित किया जा चुका था और दोनों (राम तथा कृष्ण) ने धर्म के सिद्धांतों के अनुसार जीवन जिया।

गौतम बुद्ध का जन्म राम और कृष्ण के बहुत बाद, आज से लगभग ढाई हज़ार वर्ष पूर्व हुआ था। आजकल यह प्रचारित किया जाता है कि गौतम बुद्ध ने हिन्दू धर्म में सुधार का कार्य किया। इस प्रचार के पीछे कोई तथ्य नहीं हैं। बौद्ध धर्म ने एक परजीवी के रूप में विभिन्न देशों में वहाँ के मूल धर्म के ऊपर सवारी करते हुए विस्तार किया। जैसे चीन में वह कन्फ़ूशियनिस्म और टाओ विचारधारा के संग चला। चीन में जब बौद्ध धर्म शक्तिशाली होने लगा तो चीनी शासकों ने कठोर कदम उठा कर उसे रोक दिया। जापान में बौद्ध धर्म ने शिंटो धर्म का सहारा लिया। जहाँ भी बौद्ध धर्म अत्यंत शक्तिशाली हो कर एकमात्र धर्म बनने की स्थिति में आ गया, वह देश बर्बाद हो गया। इसके उदाहरण वर्तमान में तिब्बत और पूर्व काल में अफगानिस्तान हैं।

लगभग उसी समय (850 ईस्वी के आसपास) जब चीन में बौद्ध धर्म का सफाया किया जा रहा था, भारत के बौद्ध भिक्षुओं और मठाधीशों ने बौद्ध धर्म का लेबल उतारकर हिन्दू धर्म का लेबल लगा लिया और एक नयी विचारधारा का उद्घोष कर दिया। यह विचारधारा वेदान्त कहलायी। इन्हें प्रच्छन्न बौद्ध अर्थात छिपा हुआ बौद्ध भी कहा गया।

© All Rights Free

पिछले लगभग बारह सौ वर्षों (जब से वेदान्तियों ने हिन्दू धर्म में घुसपैठ की) की हिन्दू धर्म की यात्रा अत्यंत पीड़ादायक रही है। अनगिनत हिन्दू मारे गए। हम पराधीन हो गए। इन प्रच्छन्न बौद्धों की घुसपैठ के पूर्व हिन्दू धर्म कम्बोडिया से यूरोप तक फैला था। इन घुसपैठियों ने विशाल भव्य मंदिर तो बना दिए पर हिन्दू धर्म निरंतर सिकुड़ता गया तथा हिन्दू निर्धन लाचार और मजबूर होता गया। मठाधीशों और मंदिरों के पास सोना टनों से एकत्र होता गया, पर यह एक ऐसी निरर्थकता थी जिसपर हम गर्व नहीं कर सकते, हमें शर्म आनी चाहिए।

दस हज़ार से अधिक वर्षों की यात्रा में एक-डेढ़ हज़ार वर्ष का कालखंड कुछ विशेष बड़ा नहीं है। हिन्दू धर्म के पराभव के इस कालखंड के लिए हमें ना तो आक्रमणकारियों को दोष देना चाहिए ना ही राजाओं और महाराजाओं को। किसी भी व्यक्ति का यदि मस्तिष्क रोगी हो जाए तो हाथ पैर सही काम नहीं कर सकते। आज के कम्प्यूटर युग की भाषा में कहें तो यह कह सकते हैं कि यदि मुख्य प्रोसेसिंग यूनिट में वायरस घुस जाए तो उस कम्प्यूटर का हर अंग ऊटपटाँग ही कार्य करेगा। हिन्दू धर्म के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ।

यदि हमें हिन्दू धर्म की रक्षा करनी है या हिन्दू धर्म का पुनर्जागरण एवं पुनरुत्थान करना है तो हमें उन कारणों को समझना होगा जिनके कारण पिछले लगभग बारह सौ या डेढ़ हज़ार वर्षों से हिन्दू धर्म निरंतर सिकुड़ रहा है और हिन्दू निर्धन हो रहा है। कुछ लोग इसके लिए जातिवाद, छूआछूत इत्यादि को दोषी ठहराते है। जातिवाद, छूआछूत, स्त्रियों के साथ भेदभाव इत्यादि रोग के लक्षण अवश्य हैं, ये रोग नहीं हैं। रोग कहीं गहरा है। रोग समझे बिना यदि केवल लक्षणों को देख कर उपचार करने का प्रयत्न किया जाएगा तो वह असफल ही होगा।

2. वेदान्त

वेदान्त - जैसा कि नाम से स्पष्ट है - वेदों का अंत करने वाली विचारधारा है अर्थात वेदान्त के विकास के साथ ही एक नयी व्यवस्था और नए दर्शन का प्रारम्भ हुआ जिससे वैदिक सोच और मूल्यों का अंत होने लगा। यह प्रक्रिया लगभग बारह सौ वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुई थी और इसी काल में हिन्दू धर्म और हिन्दुओं का पराभव होता गया।

वेदान्त हिन्दू धर्म में घुसपैठिये की तरह घुसा और धीरे धीरे वेदांती हिन्दू धर्म पर पूर्णरूपेण कब्जा कर के बैठ गए। यहां तक कि वे वेदांत को ही हिन्दू धर्म बताने लगे। वे यह कदापि नहीं बताते कि वेदांत मात्र एक डेढ़ हज़ार वर्ष पुराना है जबकि मूल हिन्दू धर्म दस हज़ार से अधिक वर्ष प्राचीन है। हास्यास्पद बात यह है कि वे वेदान्त और उसके द्वारा लाये गए क्रियाकर्म, विकृतियों और रूढ़ियों को सनातन धर्म कहते हैं। वैसे, वेदान्त और उसके द्वारा बढ़ावा दिए गए कर्मकाण्ड, अनुष्ठानों, मंदिरों इत्यादि के लिए सनातन का लेबल पिछले लगभग डेढ़ सौ वर्षों से ही अधिक प्रचलन में आया है। आर्य समाजियों से स्वयं को अलग दिखाने के लिए इस लेबल का प्रयोग प्रारम्भ किया गया था।

वेदांत काल में ही पुराणों (जिन्हें स्मृति कहा जाता है) और अन्य स्मृतियों की रचना हुई। इन्हीं पुराणों और स्मृतियों (जिनमें मनुस्मृति भी एक है) ने वर्ण व्यवस्था को विकृत कर जाति व्यवस्था बना दिया तथा ज्ञान के स्थान पर जन्म को ब्राह्मण निर्धारण का आधार बनाया। वेदान्त कालीन पुस्तकों, प्रचारकों और मठाधीशों ने ही व्यक्ति को कर्म से दूर कर भक्ति के माध्यम से पलायन की ओर प्रवृत्त करने का प्रयास किया। एक ओर तो इन्होंने आम आदमी को धन संपत्ति से विमुख करने के लिए माया और मोह की बात की और दूसरी ओर इन तथाकथित धर्माचार्यों ने अपने मंदिरों और मठों में अकूत संपत्ति एकत्र की। कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि आज पूरे विश्व में जितने भव्य विशाल हिन्दू मंदिर हैं वे इसी काल की देन हैं। एक ओर मंदिर विशाल से विशालतम बन रहे थे और दूसरी ओर देश गरीब होता जा रहा था और पराधीन बन रहा था। पर वेदान्ती आचार्यों, महंतों, स्वामियों, मठाधीशों के कान पर जूँ भी नहीं रेंग रही थी।

वेदान्त काल में जहाँ एक ओर पलायनवादिता को महिमामंडित किया गया तथा जाति व्यवस्था को स्थापित किया गया वहीं दूसरी ओर स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखना और उनको पाप का द्वार समझने की शुरुआत हुई। हिन्दू धर्म के सारे ऋषि विवाहित थे। वाल्मीकि रामायण में एक भी पात्र अविवाहित नहीं हैं (हनुमान के अविवाहित होने का कोई उल्लेख नहीं है)। महाभारत में एकमात्र भीष्म पितामह के अतिरिक्त कोई भी अविवाविहित नहीं है। भीष्म पितामह का विवाह ना करना किसी आदर्श के रूप में चित्रित नहीं है। यह भी कहा जा सकता है कि उनके विवाह ना करने के कारण ही दुःखद घटनाओं की श्रृंखला प्रारम्भ हो गयी। स्त्री को सम्मान और सामाजिक व्यवस्था में ऊंचा स्थान - मूल हिन्दू धर्म का आवश्यक

© All Rights Free

अंग थे। विवाह के पश्चात पुरुष द्वारा बिना किसी दोष के स्त्री को त्यागना एक अक्षम्य अपराध माना जाता था। युवा सिद्धार्थ (गौतम बुद्ध) द्वारा पत्नी यशोधरा को त्यागना हिन्दू धर्म के अनुसार क्षमा करने योग्य अपराध नहीं था।

हिन्दू धर्म में अविवाहित पुरुषों के किसी प्रकार के समूह की कोई अवधारणा कभी नहीं रही। इस प्रकार की सोच को बौद्ध धर्म ने प्रतिपादित किया और स्थापित किया। कहा जाता है की कैथोलिक ईसाई समुदाय ने भी इसे बौद्ध धर्म से ही ग्रहण किया। वेदान्तियों ने मूल हिन्दू धर्म के सिद्धांतों और परम्पराओं के विरुद्ध जा कर बौद्ध धर्म की मान्यताओं और सोच को अपना कर अविवाहित पुरुषों का एक कैडर स्थापित किया जिन्हें खूबसूरत पदनामों से सुशोभित कर महिमामंडित किया गया। इसके साथ ही स्त्रियों के प्रति घृणाभाव को लगातार बढ़ाया गया और उन्हें पाप का द्वार तक घोषित कर दिया गया। परिणामस्वरूप स्त्रियों की सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक स्थिति लगातार बिगड़ती गयी।

बात जाति व्यवस्था और स्त्रियों के प्रति सोच की ही नहीं है। वेदान्त काल में जगत को मिथ्या और ब्रह्म को सत्य माना गया, फलस्वरूप हमारे विश्वविद्यालय और अन्य ज्ञान के केंद्र घंटियाँ बजाने, मंत्रोच्चार करने और ऐसे ही अनेकों क्रियाकर्म करने में डूब गए। टेक्नोलॉजी अर्थात तकनीक के बारे में सोचना ही वर्जित हो गया। नवीन आविष्कारों के लिए प्रयास करने के स्थान पर शांति और मोक्ष की मृगतृष्णा के पीछे सारे विद्वतजन अंधी दौड़ में लग गए। कितनों को मोक्ष प्राप्त हुआ और कितनों को शांति, यह तो पता नहीं; पर हाँ, जब बारूद (gunpowder) का आविष्कार हुआ तो ये सारे वेदान्ती आचार्य किसी स्वप्नलोक में खोये मोह माया से दूर रहने का उपदेश दे रहे थे। इसका परिणाम अनापेक्षित नहीं था। तलवारों और भालों से सुसज्जित हिन्दू सेनाएँ तोपों से लैस आक्रमणकारियों के सामने धराशायी हो गयी। हिन्दू पराधीन हो गया।

3. वेदान्त को त्यागने की राह

हिन्दू की पराधीनता से मुक्ति की राह उन महापुरुषों के द्वारा प्रशस्त की गयी जिन्होंने वेदांत के सिद्धांतों को ताक पर रख एक नयी सोच की नींव रखी। यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि यह सोच उस युग के लिए क्रांतिकारी और नवीन थी, पर वास्तव में यह मूल हिन्दू धर्म की

© All Rights Free

पारम्परिक सोच का ही नवीन रूप था। इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम गुरु नानक देव का उल्लेख करना उचित होगा।

गुरु नानक देव (यद्यपि वे भक्ति युग के संत और कवि माने जाते हैं) ने मनुष्य अर्थात जगत को मिथ्या मानने से इंकार किया और भूखे को रोटी देना धर्म का कार्य माना। मानव की सेवा को गुरु नानक देव ने सबसे महत्वपूर्ण माना।

गुरु नानक देव ने जिस विचारधारा की अलख जगायी उसी की परिणति बाद में गुरु गोविन्द सिंह के रूप में हुई। जब मनुष्य पर अत्याचार हो रहा हो तब केवल स्वयं की शांति और मोक्ष के लिए प्रयत्नशील रहना घोर स्वार्थ है और पाप है - यह गुरु गोविन्द सिंह के जीवन संघर्ष का निचोड़ कहा जा सकता है। यह सोच वेदांत की विचारधारा के ठीक विपरीत थी।

उत्तर में जो कार्य सिख गुरुओं ने किया, महाराष्ट्र में वही कार्य समर्थ स्वामी रामदास ने किया। उनकी प्रेरणा और प्रयासों से ही छत्रपति शिवाजी महाराज का उदय हुआ। यदि उत्तर में सिख सेनाओं ने और पश्चिम में मराठा योद्धाओं ने मुगलों को चुनौती नहीं दी होती तो भारतवर्ष का इतिहास निश्चय ही बहुत भिन्न होता।

© All Rights Free

गुरु गोविन्द सिंह और छत्रपति शिवाजी महाराज में कुछ समानताएँ थी। पहली समानता थी कि दोनों ने इस्लाम के विस्तार को पूरे दमखम से रोका पर उन्होंने मुसलमानों के प्रति कोई दुर्भावना कभी नहीं पाली। दोनों की सेना में मुसलमानों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। हिन्दुत्ववादियों (और संभवतः धर्मनिरपेक्षतावादियों को भी) यह सीखना चाहिए। दूसरी समानता थी कि दोनों ने नयी तकनीक को अपनाने में कोई संकोच नहीं किया। यह हास्यास्पद प्रतीत हो सकता पर सत्य है कि गनपाउडर (बारूद) के सम्बन्ध में धर्म के हमारे तत्कालीन सर्वेसर्वा (अर्थात वेदांती आचार्य, जगद्गुरु, मठाधीश, स्वामी इत्यादि) तय नहीं कर पा रहे थे कि उसे कौन सी जाति के लोग हाथ लगाएँ। गुरु गोविन्द सिंह और छत्रपति शिवाजी महाराज ने इस विवाद को निरर्थक माना। तीसरी समानता जो उस काल में क्रांतिकारी थी और जिसने उन्हें समस्त वेदान्ती शक्तियों के विरुद्ध में खड़ा कर दिया - वह था जातिवाद को नकार कर योग्यता, क्षमता और कार्यकुशलता के आधार पर व्यक्ति को सम्मान देना।

दोनों, गुरु गोविन्द सिंह और छत्रपति शिवाजी महाराज, जीवन भर युद्धों में व्यस्त रहे। उन्हें इतनी फुर्सत ही नहीं मिलती कि वे दीर्घकालीन दृष्टि से ज्ञान के विकास और अनुसन्धान हेतु संस्थानों की स्थापना करते। यद्यपि उन्होंने तत्कालीन उपलब्ध तकनीक को अपनाया, तकनीक के निरंतर विकास हेतु संस्थागत ढाँचा नहीं होने से अनेक वर्षों बाद जब अन्य देशों में तोप का लघु रूप बन्दूक या पिस्टल विकसित किया गया तो भारत के राजा और नवाब इससे अनजान बने रहे। उस काल के तथाकथित ज्ञान के केंद्र तो इस मोह माया से बहुत दूर शान्ति और मोक्ष की तलाश में डूबे थे।

सहस्राब्दी के प्रारम्भिक काल में हिन्दू सेनाएँ मुस्लिम आक्रमणकारियों से इसलिए हारी थी कि हिन्दू बारूद से अनभिज्ञ थे। सहस्राब्दी के उत्तरार्द्ध में हमारी पराजय का कारण बन्दूक एवं पिस्टल का उपलब्ध ना होना था। यदि आप ईस्वी 1857 की वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई का कोई भी चित्र या मूर्ति देखें तो वे घोड़े पर सवार हाथ में तलवार लिए दिखायी देती हैं। उस काल में अंग्रेज सेना के सैनिकों के पास बंदूकें थी और अफसरों के पास पिस्टल थी। बंदूकों और पिस्टल के सामने तलवार की पराजय निश्चित है। लगभग 1600 से 1857 के बीच भारतीय राजाओं ने अंग्रेजों और अन्य यूरोपीय देशों से अनेक युद्ध लड़े और सब में हार का प्रमुख कारण बंदूकों के सम्मुख तलवार और भाले का प्रयोग था।

© All Rights Free

आश्चर्य कि बात यह है कि लगभग ढाई सौ वर्षों के लम्बे कालखंड में हमारे देश के विद्वतजनों पंडितों जगद्गुरुओं ने बन्दूक बनाने की तकनीक को देश में विकसित करने का कोई प्रयास नहीं किया। शाँति और मोक्ष की मृगतृष्णा के पीछे दौड़ते और एक दूसरे को उपाधियों, पदों एवं नामों से विभूषित करते हुए उन्हें ना तो हिन्दू की चिंता थी ना भारतवर्ष की।

अग्रेजों की दासता हमारे लिए घोर अभिशाप था। भारत भूमि में अंग्रेजों के आगमन के पूर्व और उनके प्रस्थान के बाद कभी भी भयंकर अकाल नहीं पड़ा। ब्रिटिश शासनकाल में अनेक बार देश ने दुर्भिक्ष का कोप सहन किया और अनुमान है कि इनमें लगभग दस करोड़ से अधिक भारतीय अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए। मरते हुए करोड़ों स्त्री-पुरुषों एवं अबोध बालकों से कोई शंकाराचार्य, मठाधीश, महामंडलेश्वर, सन्यासी (अपवादों को छोड़) द्रवित नहीं हुआ। वे अपने अनुष्ठानों, व्रत, उपवास, मंत्रोच्चार में डूबे रहे।

1857 की स्वतंत्रता की लड़ाई भारतीय राजाओं द्वारा लड़ी गयी थी। जब अंग्रेज़ इस युद्ध को जीत गए तो उन्होंने एक भयानक दमन चक्र प्रारम्भ किया। इस दमनचक्र का उद्देश्य भारतीयों के आत्मसम्मान और इच्छाशक्ति को पूरी तरह तोड़ कर उन्हें मानसिक रूप से

© All Rights Free

गुलाम बनाना था। जब आतंक और दमन का दौर पूरे चरम पर था, उस समय देश की आत्मा को जागृत करने का काम दो सन्यासियों ने किया - स्वामी दयानन्द सरस्वती और स्वामी विवेकानंद।

इन दोनों स्वामियों को वेदांती आचार्यों, मठाधीशों, पंडितों, जगद्गुरुओं इत्यादि के भरपूर विरोध का सामना करना पड़ा। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने तो स्पष्टरूपेण वेदांत को नकारा और वेदों के प्रति आस्था जागृत करने का प्रयास किया। स्वामी विवेकानंद ने वेदांत को नकारा तो नहीं, पर उनके विचार क्रांतिकारी थे जिनको स्वीकार करना वेदान्तियों द्वारा असंभव था और आज भी असंभव ही है। वैसे आज वेदान्तियों के मित्रों हिन्दुत्ववादियों द्वारा एक आसान रास्ता निकाल लिया गया है - वे स्वामी विवेकानंद की खूब प्रशंसा करते हैं पर उनके विचारों को ना तो पढ़ते हैं और ना ही उन पर कोई टिप्पणी करते हैं।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम की नींव इन दोनों स्वामियों - स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं स्वामी विवेकानंद - के अनुयायियों द्वारा ही रखी गयी थी। ईस्वी 1870 के आस पास आर्य समाज की स्थापना हुई। आर्य समाज ने देश के अनेक भागों, विशेषकर पंजाब, में अनेक स्कूल और कॉलेज स्थापित किये। शिक्षा के इस प्रचार ने भारतीयों में स्वतंत्रता की इच्छा उत्पन्न की। पूरे स्वतंत्रता संग्राम में पंजाब और बंगाल ने देश को अनेक स्वतंत्रता सेनानी, क्रांतिकारी और नेता दिए - इनके पीछे स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा स्वामी विवेकानंद के योगदान को सदा याद किया जाएगा।

इन दोनों विलक्षण स्वामियों के द्वारा जो जागृति लाई गयी उससे वह ज़मीन तैयार हुई जिस पर मोहनदास करमचंद गाँधी (महात्मा गाँधी) और कांग्रेस स्वाधीनता का एक व्यापक जनआंदोलन खड़ा कर पाए।

महात्मा गाँधी ने वेदान्तियों को पूरी तरह नकारा। उन्होंने जाति व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठायी, छूआछूत को पाप माना; कभी मोह माया से दूर रहने की सलाह नहीं दी, परन्तु राम को नहीं नकारा। उनकी हर सभा में राम का भजन गाया जाता था। राम को स्वीकार करते हुए उन सबको अस्वीकार करना जो पिछले लगभग डेढ़ हज़ार वर्षों में हिन्दू धर्म में घुस गए हैं - यह दोनों स्वामियों के बाद स्पष्ट रूप से महात्मा गाँधी के विचारों में दिखाई दिया। आप गाँधी से सहमत हों या असहमत पर आप यह निश्चय ही मानेंगे कि गाँधी ने

© All Rights Free

राम और कृष्ण को स्वीकारते हुए वेदांती शंकराचार्यों, जगद्गुरुओं, महामंडलेश्वरों को पूर्णतः नज़रअंदाज़ किया।

यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि भारत की स्वतंत्रता तभी संभव हो पायी जब देश में ऐसी सोच विकसित हुई जिसने वेदांती विचारों और उनको आगे बढ़ाने वाले आचार्यों, साधुओं, जगद्गुरुओं, सन्यासियों, स्वामियों, संतों को दरकिनार किया। स्वतंत्रता के पश्चात प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने आधुनिक वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा दिया। उन्होंने देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी शिक्षा के अनेक विश्वस्तरीय संस्थान स्थापित किये। जवाहरलाल नेहरू ने महात्मा गाँधी के ग्राम स्वराज्य और ग्रामोद्योग को चाहे भुला दिया हो पर वेदान्ती धर्मगुरुओं और मठाधीशों को दरकिनार करने में वे गाँधी के पदचिन्हों पर ही चले। हिन्दू धर्म को आधुनिक वैज्ञानिक सोच देते हुए पुरातनपंथी रूढ़िवादिता ढकोसलापंथी से मुक्त करने में नेहरू और उनके द्वारा स्थापित विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी के विभिन्न संस्थानों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

गुरु गोविन्द सिंह और छत्रपति शिवाजी महाराज से प्रारम्भ हुई भारत के पुनरुत्थान और पुनर्जागरण की गाथा केवल विदेशियों और विधर्मियों से मुक्ति की ही नहीं है। विदेशियों से मुक्ति के पूर्व हमें उन विचारों से मुक्ति की राह पर चलना पड़ा जिनके कारण हम युद्ध हारे थे और पराधीन हुए थे। देश के स्वाधीनता संग्राम में किसी भी वेदांती धर्मगुरु या मठाधीश का लेशमात्र भी योगदान नहीं रहा। परन्तु स्वाधीनता के उपरान्त वेदांती धर्मगुरु और मठाधीश सत्ता की मलाई चाटने के लिए लालायित होने लगे।

स्वतंत्रता के पश्चात अपनी राजनैतिक महत्त्वाकांक्षाओं को पूरी करने के लिए वेदान्ती धर्मगुरुओं और मठाधीशों का पहला विकल्प हिन्दू महासभा था। अखिल भारतीय हिन्दू महासभा की स्थापना ईस्वी 1915 में की हुई थी। स्थापना के पश्चात प्रारम्भिक दशक में इसके नेताओं (उदाहरण - पंडित मदन मोहन मालवीय, लाला लाजपत राय) ने स्वतंत्रता संग्राम के लिए संघर्ष किया था। पर बाद में हिन्दू महासभा के अधिकतर आधुनिक विकासवादी सोच वाले नेता कांग्रेस में आ गए। धीरे धीरे अखिल भारतीय हिन्दू महासभा पूरी तरह वीर सावरकर और उनके समर्थकों के अधीन हो गयी जिनका वेदांती विचारों के प्रति कोई लगाव नहीं था। (वीर सावरकर जी के विचारों के बारे में हम थोड़ी देर में चर्चा करेंगे।)

© All Rights Free

वीर सावरकर जी की हिन्दू महासभा जिस हिंदुत्व की बात करती थी वह तो हिन्दुइस्म को ही समाप्त करना चाहता था। ऐसे में वेदांती धर्मगुरुओं और मठाधीशों की राजनैतिक महत्त्वांकांक्षाओं को आगे बढ़ाने के लिए धर्मसम्राट स्वामी करपात्री (1907 - 1982; मूल नाम हरि नारायण ओझा) ने अखिल भारतीय राम राज्य परिषद नामक राजनैतिक दल का ईस्वी 1948 में गठन किया। इस दल ने 1952 के प्रथम लोकसभा चुनाव में 3 सीटें प्राप्त की थी। 1952, 1957 एवं 1962 के विधान सभा चुनावों में भी इस दल ने भाग लिया और कुछ सीटें हिन्दी क्षेत्रों (मुख्यतः राजस्थान) में हासिल की थी। पर यह स्पष्ट था कि देश के व्यापक जनमानस ने इस दल की विचारधारा को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया था। 1971 में इस दल का भारतीय जनसंघ में विलय हो गया। परन्तु एक अत्यंत लघु (लगभग नगण्य) स्वरुप में अखिल भारतीय राम राज्य परिषद आज भी जीवित है।

अखिल भारतीय जनसंघ (पूर्व नाम भारतीय जनसंघ) की स्थापना 21 अक्टूबर 1951 को दिल्ली में की गयी थी। इसके तीन संस्थापक सदस्य थे- श्यामा प्रसाद मुखर्जी, प्रोफेसर बलराज मधोक और दीनदयाल उपाध्याय। श्यामा प्रसाद मुखर्जी 1943-1946 में हिन्दू महासभा के अध्यक्ष रह चुके थे। वे 1939 में हिन्दू महासभा से जुड़े थे। उसके बहुत पहले वे कांग्रेस के टिकट पर बंगाल में विधायक के रूप में चुने गए थे। उनकी कांग्रेस और हिन्दू महासभा की यात्रा लगभग साथ साथ चलती रही। उन्हें जवाहरलाल नेहरू ने 1947 की अन्तरिम सरकार में कैबिनेट मंत्री बनाया था। उन्होंने हिन्दू महासभा से अपना रिश्ता दिसम्बर 1948 में तोड़ा था। दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के जीवनव्रती

© All Rights Free

प्रचारक थे। बलराज मधोक भी संघ के प्रचारक रह चुके थे। यह कहना गलत नहीं होगा कि जनसंघ की स्थापना राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा अपने राजनैतिक एजेंडा के तहत की गयी थी।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना ईस्वी 1925 में डॉ केशवराव बलीराम हेडगेवार ने की थी। डॉ हेडगेवार कांग्रेस और हिन्दू महासभा दोनों से जुड़े थे। संघ का प्रारम्भिक काल में प्रयास था कि वह कांग्रेस और हिन्दू महासभा दोनों से बिना कोई प्रतियोगिता या द्वंद्व किये एक अर्धसैनिक संस्कारशाला के रूप में कार्य करे। संघ का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना था जो "*धर्म-परिपालन करनेवाले, प्रत्यक्ष अपने जीवन में उसका आचरण करनेवाले तपस्वी, त्यागी एवं ज्ञानी व्यक्ति*" हों। संघ ने कभी भी अपने उद्देश्य इससे अधिक स्पष्ट या विस्तार से नहीं कहे हैं। संघ ने अपने स्थापना काल के बाद आधी शताब्दी से अधिक तक हिंदुत्व को कभी नहीं अपनाया। प्रारम्भिक कुछ दशकों में उसने धर्मगुरुओं और मठाधीशों से भी दूरी बना कर रखी। यह कहा जा सकता है कि संघ भी वेदांती महानुभावों से परहेज कर रहा था। बहुत बाद में विश्व हिन्दू परिषद् (गठन 1964) के माध्यम से अयोध्या आंदोलन (नब्बे के आसपास) के समय संघ ने साधु, संतों, जगद्गुरुओं, मठाधीशों, शंकराचार्यों की चौखट पर सिर झुकाना प्रारम्भ किया।

संघ के राजनैतिक एजेंडा के कार्यवाहक जनसंघ की भारतीय राजनीति में यात्रा लगभग ढाई दशक तक चली। सत्तर के दशक के प्रारम्भ से यह लगने लगा था कि जनसंघ राजनैतिक परिदृश्य पर बहुत कुछ ख़ास नहीं कर पा रहा। अतः 1975 में जनसंघ का जनता पार्टी में विलय हो गया। पर जनता पार्टी के माध्यम से संघ जो करना चाहता था वह नहीं कर पा रहा था तो 1980 में संघ की डोर से बंधे लोगों ने भारतीय जनता पार्टी का गठन कर लिया। भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ने गांधीवादी समाजवाद और अम्बेडकर को अपना लिया। भाजपा का अधिकृत दर्शन दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद है। एकात्म मानववाद का हिंदुत्व से कोई लेनादेना नहीं है और वेदान्त से भी कोई सम्बन्ध नहीं दिखाई नहीं देता।

© All Rights Free

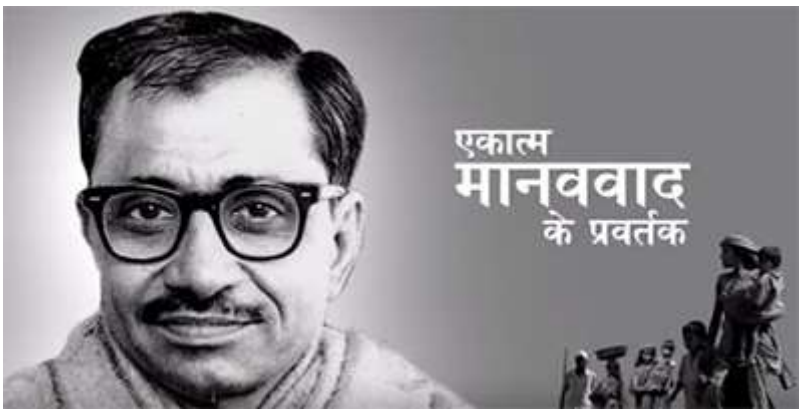

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इस देश ने गुरु नानक देव से प्रारम्भ कर वर्तमान के राजनैतिक दलों तक की लम्बी यात्रा में वेदान्त और वेदांती गुरुओं, आचार्यों, मठाधीशों, स्वामियों इत्यादि से मानसिक मुक्ति पाने के लिए एक लम्बी राह चली है। यह यात्रा आज भी अनवरत चल रही है। दुःख इस बात का है कि पिछले कुछ वर्षों में जैसे जैसे राजनैतिक दलों में इतिहासबोध समाप्त हुआ है और विचारधारा एवं दर्शन को समझने वाले लुप्तप्राय हो गए हैं, हिंदुत्व के नारे के कन्धों पर सवार होकर वेदान्त और वेदान्ती राष्ट्रीय परिदृश्य पर पुनः दिखाई देने लगे हैं।

4. हिंदुत्व

Essentials of Hindutva

- by V.D. Savarkar

(Sometime between 1921-22 Veer Savarkar completed his historic book "Essentials of Hindutva" while still in Andamans. This was later published under the pseudo name 'A Mahratta')

हिंदुत्व शब्द वेदांत की तुलना में बहुत नया है। लगभग 1921-1922 में विनायक दामोदर सावरकर (जिन्हें वीर सावरकर भी कहा जाता है) ने Essentials of Hindutva (हिंदुत्व के आवश्यक तत्त्व) नामक पुस्तक लिखी। इससे पूर्व हिंदुत्व का कोई अस्तित्व नहीं था। वीर सावरकर का हिंदुत्व नस्लवादी सोच पर आधारित था। उन्होंने हिन्दुओं को एक सांझा रक्त के बन्धन से बंधा हुआ एक समुदाय माना। उनका हिंदुत्व हिन्दू धर्म, विशेष रूप से

© All Rights Free

तत्कालीन समाज में व्यापक रूढ़ियों और परम्पराओं के विरोध में था। उन्होंने कभी भी हिंदुत्व और हिन्दू धर्म को पर्यायवाची नहीं माना। जहाँ तक मैनें वीर सावरकर को पढ़ा है, मुझे नहीं लगता कि उन्होंने किसी भी हिन्दू धार्मिक ग्रन्थ को कभी पढ़ा था। उनका हिंदुत्व उनके दिमाग की उपज थी और उनके जीवन काल में उसको, कुछ इक्के दुक्के लोगों को छोड़, किसी ने स्वीकार नहीं किया।

जैसा ऊपर कहा गया उस काल में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ भी वीर सावरकर और उनके हिंदुत्व से परहेज़ करता था। संघ के द्वितीय सरसंघचालक माधव सदाशिवराव गोलवलकर की 1960 में प्रकाशित Bunch of Thoughts में केवल एक बार हिंदुत्व का उल्लेख आता है। पुस्तक के पृष्ठ क्रमाँक 64 पर वीर सावरकर की उक्त पुस्तक का उल्लेख किया गया है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि उल्लेख करते हुए गोलवलकर पुस्तक को सुन्दर कहते हैं पर हिंदुत्व या वीर सावरकर जी की कोई प्रशंसा नहीं करते। कुछ हद तक यह कहा जा सकता है कि उनका लहज़ा आलोचनात्मक और व्यंग्यात्मक है।

our day-to-day life. The mere propagation of Hindu thought in literature and newspapers takes us nowhere. For instance, Veer Savarkarji wrote a beautiful book '*Hindutva*' and Hindu Mahasabha based itself on that pure philosophy of Hindu Nationalism. But once, the Hindu Mahasabha passed a resolution that Congress should not give up its 'nationalist' stand by holding talks with Muslim League but should ask Hindu Mahasabha to do that job! What does it mean? It only means that the hybrid nationalism of Congress was of the pure variety, whereas Hindu Mahasabha represented the Hindu counterpart of the rabidly communal, anti-national Muslim League! How did this strange perversion set in? Because, the deep-rooted conviction which would spontaneously evoke the ready affirmation "yes, this is Hindu Nation" under all conditions, even in dreams, was not there.

जब संघ हिन्दुत्व से परहेज़ कर रहा था तो जनसंघ के लिए तो हिंदुत्व का उल्लेख करना भी वर्जित होना स्वाभाविक ही था। दीनदयाल उपाध्याय जी की पुस्तक एकात्म मानववाद में एक बार भी हिंदुत्व या हिंदूइस्म का उल्लेख नहीं है। बाद में जब जनसंघ का विसर्जन कर भारतीय जनता पार्टी का गठन हुआ। उसके बाद तो हिन्दू या हिंदुत्व से कोई सार्वजनिक रिश्ता संभव ही नहीं था। आप अटलबिहारी वाजपेयी एवं लालकृष्ण आडवाणी के भाषण या लेख उठा कर देख सकते हैं, आपको हिंदुत्व का कहीं उल्लेख नहीं मिलेगा।

© All Rights Free

यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि भारत के किसी भी प्रमुख राजनैतिक दल ने कभी नस्लवादी हिंदुत्व को स्वीकार नहीं किया। फिर भी पिछले कुछ वर्षों में आश्चर्यजनक रूप से हिंदुत्व देश ही नहीं पूरे विश्व में चर्चा में आ गया है। इसका एक प्रमुख कारण वर्तनाम संघ नेतृत्व का इस सम्बन्ध में लगातार बयान देना है और दूसरा यह है कि आज के युग में राजनेता हों या मीडियाकर्मी या संघ के स्वयंसेवक भी - किसी ने भी वीर सावरकर को पढ़ा नहीं है। इसलिए किसी को भी यह जानकारी नहीं है कि हिंदुत्व एक नस्लवादी (Racist) सोच है जो सनातन हिन्दू धर्म के मूल सिद्धांतों और दर्शन को पूरी तरह नकारता है।

An American may become a citizen of India. He would certainly be entitled, if bona fide, to be 'treated as our Bharatiya or Hindi, a countryman and a fellow citizen of ours. But as long as in addition to our country, he has not adopted our culture and our history, inherited our blood and has come to look upon our land not only as the land of his love but even of his worship, he cannot get himself incorporated into the Hindu fold. For although the first requisite of Hindutva is that he be a citizen of Hindusthan either by himself or through his forefathers, yet it is not the only requisite qualification of it, as the term Hindu has come to mean much more than its geographical significance.

Bond of common blood

The reason that explains why the term Hindu cannot be synonymous with Bharatiya or Hindi and mean an Indian only, naturally introduces us to the second essential implication of that term. The Hindus are not merely the citizens of the Indian state because they are united not only by the bonds of the love they bear to a common motherland but also by the bonds of a common blood. They are not only a Nation but also a race-jati. The word jati derived from the root Jan to produce, means a brotherhood, a race determined by a common origin,-possessing a common blood. All Hindus claim to have in their veins the blood of the mighty race incorporated with and descended from

सावरकर स्पष्ट रूप से कहते हैं कि कोई भी अमेरिकन कुछ भी कर ले वह हिन्दू नहीं बन सकता क्योंकि उसका खून हिन्दू नहीं होगा। आज अनेक देशों में वहाँ के मूल निवासी हिन्दू धर्म को अपना रहे हैं। सावरकर (और संभवतः वर्तमान सरसंघचालक मोहन भागवत) भी ऐसे किसी व्यक्ति को हिन्दू मानने को बिलकुल तैयार नहीं है क्योंकि उसका रक्त हिन्दू नहीं बन सकता। इसमें कोई संशय नहीं है कि इस प्रकार के नस्लवादी सोच से हिन्दू धर्म संकुचित होगा। बहुत से विद्वान् मानते हैं कि सावरकर चाहते थे कि हिन्दू धर्म संकुचित होते होते समाप्त हो जाए और उसका स्थान उनके द्वारा प्रतिपादित हिंदुत्व ले ले। मुझे नहीं मालूम कि क्या वर्तमान संघ नेतृत्व भी यही चाहता है। यह भी संभव है कि उन्होंने हिंदुत्व को मात्र

© All Rights Free

एक नारे या जुमले के रूप में उठा लिया है और वे सावरकर द्वारा प्रतिपादित इसके अर्थ से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं।

5. आज के हिंदुत्व का वेदान्त और रूढ़िवादिता को समर्थन

आज के युग में दर्शन शास्त्र (Philosophy) का मज़ाक उड़ाने का फैशन है। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि सभी भारतीय राजनैतिक दलों में दर्शन और विचारधारा को समझने वाले व्यक्तियों का नितांत अभाव है। विचारधारा (Ideology) की बात हर नेता अपने भाषणों में करता है पर समझता कोई नहीं है। मैं भाजपा के अनेक वरिष्ठ नेताओं से मिला हूँ पर कोई भी मुझे भाजपा की आधिकारिक विचारधारा एकात्म मानववाद विस्तार से नहीं समझा पाया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ तो विचारधारा के नाम पर गोलमटोल बातें करने में ही विश्वास करता है। संघ के नेता निजी वार्तालाप में साफ़ कहते हैं कि संघ कार्य हिन्दुओं को संगठित करना है, यदि हिन्दुओं में कुछ चोर लुटेरे हैं तो संघ उनको भी संगठित कर देगा। अंग्रेजी में एक कहावत है जिसका अर्थ है खरगोश के साथ दौड़ना और शिकारी कुत्तों के साथ शिकार करना (Run with the hares and hunt with the hounds) जो संघ पर पूरी तरह लागू होती है। संघ का एक संगठन गौहत्या के विरुद्ध आंदोलन करता है और दूसरा उत्तर पूर्व में गौहत्या का समर्थन करता है। एक समय था जब संघ स्वदेशी जागरण मंच को खूब प्रोत्साहित कर रहा था। फिर जब सत्तासीन भाजपा के नेता विदेशी कंपनियों के स्वागत में बिछने लगे तो स्वदेशी जागरण मंच को लगभग निष्क्रिय कर दिया गया। आप संघ के नेताओं से वंशवाद के विरुद्ध और लोकतांत्रिक मूल्यों के पक्ष में लम्बा भाषण जब चाहे सुन सकते हैं, पर आप उनके सरसंघचालक के चुनाव की प्रक्रिया पूछ लें तो वे दाँए बाँए देखने लगेंगे।

विचारधारा में जानबूझकर अस्पष्टता रखने और विरोधाभासी विचारों को साथ लेकर चलने के कई तात्कालिक लाभ होते हैं, पर भटकाव और दिशाहीनता की पूरी संभावना रहती है। एक समय था जब संघ को वीर सावरकर और उनके हिंदुत्व से परहेज़ था। संघ की सदा यह समस्या रही है कि उसके अंदर से उभरे नेताओं को ना तो समाज पर्याप्त सम्मान देता है और ना ही वे स्वयं। इसी कारण जनसंघ की स्थापना के समय उन्हें श्यामाप्रसाद मुखर्जी

© All Rights Free

की आवश्यकता पड़ी थी। बाद में भी उन्होंने इसी कारण से महात्मा गाँधी, बाबासाहेब अम्बेडकर, लोकनायक जयप्रकाश नारायण इत्यादि को अपनाया। जब तक वीर सावरकर जीवित थे तो वे संघ के लिए एक खतरा थे और इसीलिये अस्वीकार्य थे। फरवरी 1966 में वीर सावरकर के देहांत के पश्चात उनसे कोई खतरा नहीं रहा। उनकी हिन्दू महासभा भी धीरे धीरे मृतप्राय हो रही थी। ऐसे में संघ के लिए वीर सावरकर को अपना कर हिंदुत्व को गले लगाने में कोई अड़चन नहीं थी। हाँ, भाजपा गाँधीवाद, समाजवाद, एकात्म मानववाद में विश्वास की उद्घोषणा करते हुए दबी जबान में हिंदूवादी होने का दम भरती रही। अटलबिहारी वाजपेयी और लालकृष्ण आडवाणी वाली पीढ़ी को जनसंघ के दिन याद थे। इसलिए वे भारतीय जनता पार्टी को पुनः जनसंघ बनाने को कदापि तैयार नहीं थे।

2014 के लोक सभा चुनावों में पहली बार भाजपा को पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ और एक ऐसी पीढ़ी के नेताओं ने सत्ता संभाली जिन्होंने जनसंघ का दौर नहीं देखा था। इन नेताओं का इतिहासबोध और दर्शनशास्त्र का ज्ञान लगभग शून्य है। ये सत्ता में "*सबका साथ, सबका विकास*" और काले धन की वापसी जैसे नारों / जुमलों के सहारे आये थे, जिनका हिंदुत्व से कोई लेनादेना नहीं था। सत्ता पर आसीन होने के बाद नारों / जुमलों की उपयोगिता लगभग शून्य हो जाती है। पर चुनाव लगातार आते रहते हैं और यदि हर चुनाव जीतना हो तो ऐसे नारे / जुमले चाहिए होते हैं जिनसे भावनाओं को भड़काया जा सके। 2014 के नारों के अनुपयोगी हो जाने के बाद भारतीय जनता पार्टी को हिंदुत्व नामक जुमले ने आकर्षित

© All Rights Free

किया। इस जुमले का फ़ायदा यह है कि वीर सावरकर के देहावसान के आधी शताब्दी बाद बहुत कम लोग हिंदुत्व की नस्लवादी (Racist) परिभाषा से परिचित हैं। इसी कारण इसको बिना किसी संकोच के हिन्दू धर्म का पर्यायवाची बताया जा सकता है, यद्यपि जो हिन्दू धर्म को जानते हैं वे जानते हैं कि हिन्दू धर्म कभी भूमि या नस्ल के आधार पर परिभाषित नहीं हो सकता। हिंदुत्व के ये नए सर्वेसर्वा हिंदुत्व की उनके द्वारा दी गयी परिभाषा के अनुसार कभी तो मुसलमान को भी हिन्दू घोषित कर देते हैं और कभी मुसलमानों पर आक्रमण करने लग जाते हैं। इनके लिए हिंदुत्व एक विचारधारा या दर्शन नहीं है। इनके लिए हिंदुत्व चुनाव जीतने के लिए अपनाया गया एक ऐसा जुमला या हथकंडा है जिसको वे जैसा चाहे परिभाषित करते रहते है। सच यह है कि उनका हिंदुत्व कुछ हद तक वीर सावरकर द्वारा दी गयी संकुचित नस्लवादी परिभाषा पर आधारित तो है पर वे उससे आबद्ध नहीं हैं। जब आप विचारधारा और आदर्शों के स्थान पर जुमलों और हथकंडों से काम चलाते हैं तो बहुत अधिक स्वतंत्रता, या कह सकते हैं स्वच्छंदता, मिल जाती है।

वैचारिक स्वच्छंदता बहुत उपयोगी होती है। विचारधारा जब लचीली हो जाए तो जो चाहे किया जा सकता है। जब कोई रेस्टोरेंट वाला फ्रिज से एक सप्ताह पुरानी सब्जी निकाल कर ग्राहकों को परोसता है तो उसमें अच्छा तड़का लगाना आवश्यक होता है। यदि आधी शताब्दी पुराने पिटे हुए असफल जुमले (आप चाहें तो हिंदुत्व को विचारधारा भी कह सकते हैं) को निकालकर आज के युग में पेश करना है तो बिना तड़के के यह संभव नहीं है। भाजपा के सत्ताधीशों ने बिना गंभीरता और गहराई से विचार किये केवल राजनैतिक लाभ की दृष्टि से हिंदुत्व को भव्य मंदिरों और महालोकों का तड़का लगाया है।

पाँच हज़ार करोड़ का विशाल अयोध्या मंदिर, हज़ार करोड़ का महाकाल महालोक जैसे अनेक उदाहरण हमारे सामने हैं। ध्यान रहे कि पिछले वर्षों में देश के प्रतिष्ठित संस्थानों जैसे आई आई टी एवं अखिल भारतीय भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के निदेशक झोली फैलाये पूर्व छात्रों से दान की भीख मांग रहे हैं। यह बिलकुल वेदान्त काल जैसा ही है जब पूरे भारतवर्ष (कम्बोडिआ तक फैला) में विशाल मंदिर बनते रहे और हिन्दू लगातार कमज़ोर होता गया। अयोध्या के सन्दर्भ में कम्बोडिआ के अंगकोर वाट का उल्लेख करना उपयुक्त होगा जो विश्व का विशालतम धर्म स्थल है। इसका निर्माण ईस्वी 1113 से 1150 के मध्य एक

© All Rights Free

विष्णु मंदिर के रूप में सम्राट सूर्यवर्मन द्वितीय द्वारा करवाया गया था। अंगकोर वाट के निर्माण के पचास वर्षों के अंदर कम्बोडिआ से हिन्दू धर्म लुप्त हो गया और बाद में उसे एक बौद्ध मंदिर के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

कम्बोडिआ तो दूर की बात है। भाजपा और संघ के शक्तिशाली महानुभाव तो, तात्कालिक लाभ के फेर में, अपनी विचारधारा और चिंतकों को ही भूल चुके हैं। मुझे बहुत अच्छी तरह स्मरण है कि जब में साठ के दशक में एक बालक के रूप में संघ की शाखा जाता था तो वहाँ मैनें विशाल भव्य मंदिरों की आलोचना सुनी थी। बहुत पुरानी बातें ना भी करें तो कुछ वर्ष पूर्व तक संघ के सम्माननीय दत्तोपंत ठेंगड़ी (जिन्हें संघ में राष्ट्र ऋषि भी कहा जाता है) ने विशाल भवनों की सदा आलोचना की। उनका मानना था कि विशाल भवनों से सामाजिक संगठनों में भ्रष्टाचार और आपसी झगड़े आते हैं। विडंबना यह है कि आज दत्तोपंत ठेंगड़ी के नाम से भोपाल में संघ के एक संगठन का विशाल भवन है।

© All Rights Free

विशाल भव्य मंदिर भ्रष्टाचार के केंद्र बनते हैं और देश के बहुमूल्य संसाधनों को अनुपयोगी दिशा में लगाते हैं। पर इन बातों से अधिक हानिकारक यह है कि ये उन वेदान्ती आचार्यों, मठाधीशों, जगद्गुरुओं, महंतों को महिमामंडित कर शक्तिशाली बनाते हैं जिनसे मानसिक मुक्ति के लिए पिछले पांच सौ वर्षों से इस देश के प्रबुद्ध वर्ग ने संघर्ष किया है। यह अत्यंत दुखद है कि जगत को मोह माया बता कर जनमानस को पलायन के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करने वाले वेदांत और वेदांती हिंदुत्व के कन्धों पर सवार होकर देश में पुनः स्थापित हो रहे हैं। और इस अधोमार्ग पर चलने के लिए आज के सत्ताधीश सरकारी खजाने को दोनों हाथ से लुटा रहे हैं।

हिंदुत्व नामक जुमला और हज़ारों करोड़ों रुपयों से बन रहे विशाल भव्य मंदिर और महालोक तथा समस्त वेदांती महानुभाव मिलकर भी हिन्दू धर्म नहीं हैं। हिन्दू धर्म कई हज़ार वर्ष पुराना है। हिंदुत्व मात्र सौ वर्ष पुराना है। वेदांत तथा देश के समस्त विशाल भव्य मंदिर मात्र पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों के कालखंड के हैं। आवश्यक है कि हम समझें कि जिन गलतियों के कारण हम पराधीन बने, जिनके कारण हिन्दू धर्म संकुचित हो गया - उन्हें तात्कालिक राजनैतिक लाभ के लिए फिर दोहराया ना जाए। आज बिना सोचे समझे हिंदुत्व और वेदांत के जिस सम्मिश्रण का भाजपा और संघ द्वारा हल्ला मचाया जा रहा है वह हिन्दू धर्म और भारत देश के लिए बहुत बड़ा खतरा है। साथ ही यह उस ऐतिहासिक प्रक्रिया को पलटने का प्रयास है जिस की शुरुआत गुरु नानक देव द्वारा की गयी थी और जिसको गुरु गोविन्द सिंह, छत्रपति शिवाजी महाराज, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू जैसे अनेक महापुरुषों ने आगे बढ़ाया था।

© All Rights Free

6. निष्कर्ष

अभी कुछ दिन पूर्व तमिलनाडू के एक राजनेता ने सनातन धर्म को समाप्त करने की बात की। उनके वक्तव्य का व्यापक विरोध हुआ है। कुछ उनके जैसी ही बातें अम्बेडकरवादी करते रहते हैं। वामपंथी हर प्रकार के धर्म के विरोधी होते हैं पर इस्लाम एवं ईसाई धर्म का विरोध करने की हिम्मत ना जुटा पाने के कारण केवल हिन्दू धर्म का मुखर विरोध करते हैं।

हिन्दू धर्म का विरोध दो प्रकार के लोग करते हैं - एक, जो हिन्दू धर्म को नेस्तनाबूद करके अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाना चाहते हैं और दूसरे वो जो हिन्दू धर्म को समझे बिना हिन्दुओं द्वारा की जाने वाली कुछ गलतियों को हिन्दू धर्म मान लेते हैं। पहली श्रेणी के व्यक्तियों से वाद विवाद करना निरर्थक है। दूसरी श्रेणी के व्यक्तियों को हिन्दू धर्म के मूल सनातन स्वरुप को समझाना चाहिए। पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों में जो विकृतियाँ हिन्दू धर्म में घुसपैठ कर गयी हैं उन्हें हिन्दू धर्म का आवश्यक अंग समझना बिलकुल गलत है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि देश और विदेश में विशेषकर हिन्दुओं में इस बारे में जागृति लाना अत्यंत आवश्यक है।

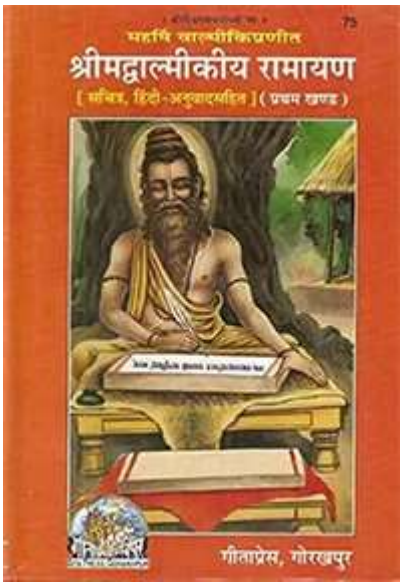

मैंने पिछले कई वर्षों में वाल्मीकि रामायण, महाभारत एवं ऋग्वेद का अध्ययन किया। स्पष्ट दिखता है कि वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में कुछ अंश पिछले हज़ार डेढ़ हज़ार वर्ष में जोड़े गए हैं। उदाहरण के लिए बिना किसी संशय के यह कहा जा सकता है कि उत्तर

© All Rights Free

काण्ड वाल्मीकि रामायण के मूल ग्रन्थ में नहीं था और बाद में जोड़ा गया है। यदि बाद में जोड़े अंशों को हटा दिया जाए तो कहीं भी जातिवाद या छूआछूत या स्त्रियों का अपमान थोड़ा भी दिखाई नहीं देता।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि एकपुस्तकवादी धर्मों में उनकी पवित्र पुस्तक में लिखा प्रत्येक शब्द पत्थर की लकीर है जिसके बारे में प्रश्न करना या शंका करना किसी भी व्यक्ति (विशेषकर उस धर्मावलम्बी) के लिए पूर्णतः वर्जित है। एकपुस्तकवादी धर्मों में धर्मावलम्बी की तुलना एक भेड़ से की जाती है जो बिना दिमाग का प्रयोग किये गड़रिये के द्वारा दिखाए मार्ग पर चलती रहती है। इसके विपरीत हिन्दू धर्म में किसी भी ग्रन्थ को समग्र रूप में पढ़ना होता है, किसी भी श्लोक को उसके सन्दर्भ में समझना आवश्यक होता है तथा उसके बाद पढ़ने वाले को अपने मस्तिष्क का उपयोग कर उचित निर्णय लेना होता है। कहा जाता है कि ऋषि गलती कर सकते हैं, शास्त्र में भी त्रुटि हो सकती है पर प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में जो सनातन ऋषि विद्यमान होता है वह सदा उचित मार्गदर्शन करता है। हिन्दू धर्म का मूलाधार हर व्यक्ति के हृदय में बसने वाला वह सनातन ऋषि है जो ब्रह्म का रूप है।

हिन्दू धर्म दस हज़ार वर्षों से अधिक समय से निरंतर जीवित है क्योंकि यह प्रत्येक व्यक्ति के मन में बसने वाले ऋषि पर आधारित है। समस्त शास्त्र, उनकी रचना करने वाले ऋषि और उनका अर्थ समझ कर समझाने वाले विद्वतजन केवल गुरु की भूमिका निभाते हुए अन्धकार से ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जाने का कार्य करते हैं। हर व्यक्ति को अपने मस्तिष्क और मन का प्रयोग करते हुए स्वज्ञान के आधार पर उचित अनुचित का निर्णय करना होता है और अपने निर्णय के अनुसार किये कर्मों का फल व्यक्ति भोगता है।

शास्त्रों में से स्वविवेक से कुछ अंशों को स्वीकार करना और कुछ को अस्वीकार कर देना - यह स्वतंत्रता केवल हिन्दू धर्म में उपलब्ध है। इस सन्दर्भ में यह बताना भी उपयुक्त होगा कि हिन्दू शास्त्रों में अनेक स्थानों पर विरोधाभास प्रतीत होता है जो बहुत उलझन में डालने वाला लगता है। हिन्दू शास्त्रों को समझना और जानना एकपुस्तकवादी धर्मों की पुस्तकों को समझने से कहीं अधिक कठिन होता है। हिन्दू शास्त्रों के पढ़ते समय पाठक को अनेक सन्दर्भों और गूढ़ अर्थों को समझते हुए अपना मष्तिक खुला रखना होता है। जो धर्म आपको अपने ही शास्त्रों के अंशों और कई बार पूरे ग्रंथों को अस्वीकार करने की सुविधा

देता है उसमें सीखने समझने की यात्रा वैसी आसान तो कदापि नहीं हो सकती जैसी एक भेड़ के लिए गड़रिये के पीछे चलना होता है। हिन्दू धर्म ज्ञान-आधारित जीवन पद्धति है जो व्यक्ति को एक सोचने समझने वाले मनुष्य के रूप में देखती है।

जो सोचने समझने वाले व्यक्तियों का धर्म है उसमें विश्लेषण और तर्क की शक्ति सदा उपस्थित रहती है और वही उसकी सबसे बड़ी ताकत है। आज समय आ गया है कि प्रबुद्ध हिन्दू विश्लेषण और तर्क की अपनी पैनी बुद्धि का प्रयोग कर अपने पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों के इतिहास पर दृष्टि डाले। हिन्दू धर्म में जो सनातन है अर्थात जो सदा चलता रहा है उसे पहचानें और समझें। हाल के वर्षों (लगभग डेढ़ हज़ार) में जो प्रच्छन्न बौद्ध (वेदांती), निहित स्वार्थ एवं उनके द्वारा स्थापित अविवावहित पुरुषों के समूह हिन्दू का मुखौटा पहन कर, सनातनी का लेबल लगा कर तथा भव्य पदनामों से स्वयंभू सुशोभित होकर हमें कमज़ोर करते रहे हैं उन्हें नकारना होगा। हमें यह भी समझना होगा कि संस्कृत में लिखा हर वाक्य या श्लोक ब्रह्मवचन नहीं है। बकवास किसी भी भाषा में की जा सकती है और संस्कृत इसका अपवाद नहीं है।

पिछले लगभग डेढ़ हज़ार वर्षों में जिन संस्कृत ग्रंथों (पुराणों एवं स्मृतियों) की रचना की गयी, उन्हें हमें आँख मूँद कर स्वीकारने से स्पष्ट इंकार करना होगा। हाँ, यदि उनमें कुछ अंश हैं जो हिन्दू धर्म के मूल सनातन सिद्धांतों पर खरे उतारते हैं और समाज एवं विश्व के लिए कल्याणकारी हैं, उन्हें स्वीकारने से कोई परहेज़ भी नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार हमारे प्राचीन ग्रंथों में जो अकल्याणकारी है, समाज को कमज़ोर करता है तथा हिन्दू धर्म के मूल सनातन सिद्धांतों एवं आदर्शों का उल्लंघन करता है, उसे नकारने में भी कोई संशय अथवा संकोच नहीं होना चाहिए। इस प्रकार की परिवर्तनशीलता और लचीलापन हिन्दू धर्म की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है और यही हिन्दू धर्म की सबसे बड़ी शक्ति है।

जो राजनेता और अन्य बन्धुगण सनातन धर्म को समाप्त करने की बात करते हैं, मेरा उनसे विनम्र निवेदन है कि कृपया विध्वंस की मानसिकता त्याग कर रचनात्मक निर्माण की मानसिकता अपनाएँ। यदि कोई अपना परिजन किसी रोग से ग्रसित हो जाता है तो हम रोग का निदान कर उचित औषधि आहार विहार एवं यदि आवश्यक हो तो शल्य क्रिया से उपचार करते हैं, ना कि परिजन की हत्या कर दाह संस्कार कर देते हैं। इसे ऐसे भी कह सकते हैं कि हमारे प्रिय धर्म को एक कैंसर जैसे वायरस ने ग्रसित कर लिया है; उसी वायरस के कारण

© All Rights Free

हम पराधीन हुए, हमारे करोड़ों भाई बहन अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए। अब या तो हम वायरस को समाप्त करने के लिए कड़वी दवाई पी सकते हैं और शल्य क्रिया का सहारा ले सकते हैं या फिर अपने प्रिय धर्म को ही मारने की बात कर सकते हैं। मेरा मानना है कि यदि हम सब मिलकर रोग को पहचानते हुए प्रयास करेंगें तो हम अपने प्रिय धर्म को रोग से मुक्ति दिलाने में अवश्य सफल होंगें।

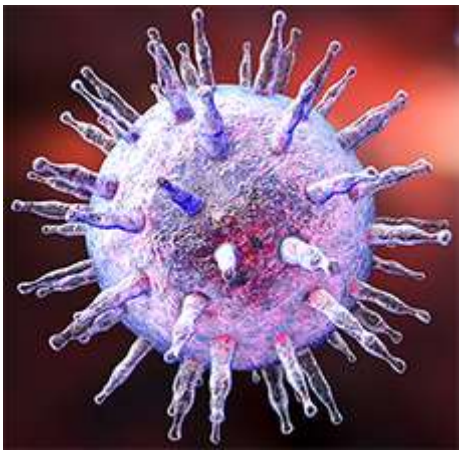

हिन्दू धर्म सार्वभौमिक है - लगभग हज़ार वर्ष पूर्व तक कुछ स्थानीय फेरबदल के साथ लगभग पूरे विश्व में फैला हुआ था। रूस हो या जापान या यूरोप या कम्बोडिआ या इंडोनेशिया या दक्षिण अमरीका के स्थानीय निवासी - सबके जीवनदर्शन में हिन्दू धर्म की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। यह निर्विवाद तथ्य है कि एक हज़ार वर्ष पूर्व एकपुस्तकवादी धर्मों (यहूदी, इस्लाम और ईसाई) के अनुयायी विश्व जनसंख्या का एक प्रतिशत से भी कम थे। एक हज़ार वर्षों के उपनिवेशवाद और बेहिसाब कत्लेआम तथा व्यापक जनसंहार के बावज़ूद वे अभी भी विश्व जनसंख्या का पचास प्रतिशत से कम ही हैं। हिन्दू धर्म उनके निरंतर प्रहारों से संकुचित अवश्य हुआ है। पर हिन्दू धर्म की वैज्ञानिकता, ज्ञान-आधारित सोच, विश्लेषणात्मक तथा तार्किक दृष्टि अद्वितीय है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम उसकी इस मूलभूत शक्ति को जागृत करें और उस में आए दोषों से उसे मुक्त करें। साथ ही हिन्दू धर्म को एक भूभाग या एक नस्ल तक सीमित करने के प्रयासों को भी असफल करें। हिन्दू धर्म को बहुत बड़ा खतरा उन मूर्खों से भी है जो कुछ भी पढ़ने लिखने में विश्वास नहीं करते, अपनी सीमित बुद्धि को ही सर्वोच्च समझते हैं और हिन्दू धर्म के ध्वज वाहक बनकर हिन्दू धर्म को ही लगातार संकुचित करते हैं।

© All Rights Free

चाहे वेदान्त की निर्लिप्तता एवं मोह माया का उपदेश हो, चाहे उसके द्वारा रचित स्त्रियों को पाप का घड़ा बताने वाले अविवाहित पुरुषों के गिरोह हों, चाहे वेदांत काल में रचे गए पुराण एवं विभिन्न स्मृतियाँ हों, चाहे जातिवाद और छूआछूत में विश्वास करने वाले रूढ़िवादी हों, चाहे नस्लवादी सोच वाले लोग हों, चाहे मूर्ख अर्द्धशिक्षित ध्वजवाहक हों - ये सब हिन्दू धर्म के लिए खतरा अवश्य हैं। परन्तु मूल हिन्दू धर्म की विश्लेषणात्मक वैज्ञानिक सोच इन सबका मुकाबला कर इनको इतिहास के गर्त में डालने की सामर्थ्य रखती है। इन दोषों को समाप्त करने की प्रक्रिया लगभग पांच शताब्दी पूर्व प्रारम्भ हो चुकी है। आज आवश्यकता यह है कि हम सब, विशेषकर प्रबुद्ध वर्ग, पिछले पाँच सौ वर्षों के इतिहास को समझ कर उस प्रक्रिया को और अधिक सशक्त एवं वेगवान करें। दोषों के कारण ही हिन्दू धर्म संकुचित हुआ और हिन्दू पराधीन हुआ था। जैसे जैसे हम दोषों से मुक्त कराते जायेंगें, हिन्दू धर्म का विस्तार होगा और हिन्दू अधिक सुखी एवं समृद्ध होगा। आइये, मिलकर उस लक्ष्य की ओर आगे बढ़ें।

अनिल चावला
हिन्दू विचारक
18 सितम्बर 2023

सम्पादकीय सहायता - एडवोकेट सुश्री योगिता पन्त

सर्वाधिकार पूर्णतः मुक्त

लेखक परिचय

नाम	अनिल चावला
जन्म वर्ष एवं स्थान	1959, दिल्ली
वर्तमान निवास	भोपाल, मध्य प्रदेश, भारत
पूर्व में निवास	दिल्ली, जादूगोड़ा, वड़ोदरा, मुम्बई, रतलाम, इन्दौर, नासिक, जलगांव
शिक्षा	बी० टेक० मेकैनिकल इंजीनियरिंग आई० आई० टी० मुम्बई, एल० एल० बी०, एल० एल० एम०, वर्तमान में पी० एच० डी० हेतु अध्ययनरत
पंजीकरण	अधिवक्ता एवं इन्सॉल्वेंसी प्रोफेशनल
व्यावसायिक कार्य सम्बंधित वेबसाइट	https://indialegalhelp.com/ https://hindustanstudies.com/
रचनात्मक वेबसाइट	http://www.samarthbharat.com/
यू टयूब	https://www.youtube.com/@valmikiramayan
फेसबुक	https://www.facebook.com/hinduthinker

© All Rights Free

हिन्दू धर्म से सम्बन्धित लेखक की कुछ रचनाएँ

वाल्मीकि रामायण के राम

यह 111 एपिसोड (प्रकरण) की एक श्रृंखला है जिसमें योगिता पंत जिज्ञासु के रूप में प्रश्न पूछती हैं और अध्ययनकर्ता अनिल चावला उत्तर देते हैं। इस प्रकार वार्तालाप के माध्यम से सम्पूर्ण रामकथा सुनाने का प्रयास किया गया है। आप इसे YouTube पर देख भी सकते हैं और Spotify, Google, Gaana, Amazon या किसी भी अन्य पॉडकास्ट प्लेटफार्म पर सुन भी सकते हैं।

https://www.youtube.com/@valmikiramayan

https://open.spotify.com/show/2mkDPDRnT62zTWBfQsobxN?si=acfb33587d144b28

Fundamentals of Eternal Hinduism

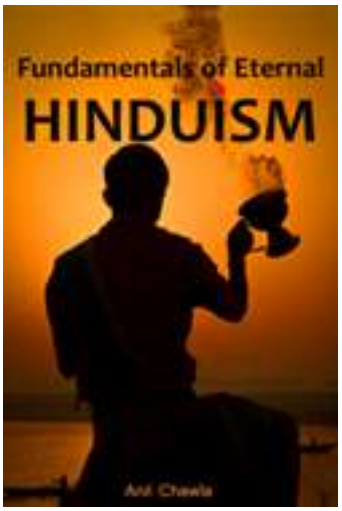

http://samarthbharat.com/files/eternalhindu.pdf

Ramayan and Hindu Economics

https://www.samarthbharat.com/files/ramayaneconomics.pdf

To Be Dev or Danav – The Choice

http://www.samarthbharat.com/devdanav.html

© All Rights Free